P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-1* April- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

वैश्वीकरण और असमानता

प्रशान्त
शोध छात्र,
अर्थशास्त्र विभाग,
गोविंद बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान,
झूसी, प्रयागराज

सारांश

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रणाली को नये ढंग से परिभाषित करने एवं उसमें एक निर्णायक बदलाव लाने की अर्न्तनिहित शक्ति अर्जित कर ली है। इस शक्ति ने समाज एवं काल के सम्बन्धों को हमेशा–हमेशा के लिये नये स्तरों पर पहुँचा दिया है इसको गति देने में आईएमएफ वर्ल्ड बैंक जैसी संस्थाओं का प्रमुख योगदान रहा है। जिसकी वजह से यह प्रक्रियाआज भी एक नीति के रूप में राष्ट्रों द्वारा संचालित हो रही है। इन संस्थाओं की वजह से निगमों एवं पूंजी का उदारीकरण हुआ और पूंजी की वृद्धि दर राष्ट्रों की संवृद्धि दर से अधिक तेजी से बढ़ी जिसके कारण असमानता की गम्भीर चुनौती खड़ी हो गयी और कई विकासशील और उदयमान अर्थव्यवस्थाओं में लोकतंत्र के विकसित और लोकतांत्रिक मूल्यों के बचे रहने के मार्ग में गम्भीर चुनौतियां खडी हो रही है।

मुख्य शब्द : लेसिस फेयर, जोखिम रहित, पूँजीवाद, वैश्वीकरण, असमानता।

प्रस्तावना

वैश्वीकरण को एकरूपता एवं समरूपता की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है। जिसमें एक देश के आर्थिक क्रियाओं का विस्तार उसके राजनीतिक भूगोल से बाहर आकर करने की प्रक्रिया के रूप में जाना एवं पहचाना जाता है। इस वर्तमान वैश्वीकरण की प्रक्रियामें विभिन्न देशों के लोगों, वहां की कंपनियां और सरकारों के बीच अंर्तक्रिया एवं एकीकरण के द्वारा इसमें भागेदारी कर रही व्यापारिक एवं पूंजी की बाधाओं को न्यूनतम करने के प्रयास किये जाते है क्योंकि इस प्रक्रिया में पूंजी व्यवसायिक संगठनों की आत्मा होती है। वैश्वीकरण मानव जीवन के कई पहलुओं सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ढंग से प्रभावित कर रहा है। नकारात्मक ढंग से प्रभावित होने वाले कारणों में असमानता प्रमुख है। जिसके कारण समाज, सभ्यता, संस्कृति और लोकतंत्र के विकास में प्रत्येक स्थापित मानवीय मूल्यों को चुनौतियां मिल रही है।

साहित्यावलोकन

जोसेफ ई स्टिग्लिट्ज(2012) ने अपनी पुस्तक में विश्व के जानी मानी वित्तीय संस्थाओं की तार्किक ढंग से आलोचनात्मक मूल्यांकन करते हुए उसमें कमियों को दूर करने की बात करते है। जोसेफ ई स्टिग्लिट्ज कहते है कि आईएमएफ की स्थापना कीन्स् द्वारा एक जनादेश के आधार पर हुई थी। जिसका प्रमुख लक्ष्य विकासशील देशों को पूर्णरोजगार की ओर अग्रसर करना था लेकिन आईएमएफ अपने इन रास्तों से हट गया और वित्तीय एवं व्यापारिक समुदायों के प्रति उत्तरदायी हो गया। इस कारण कई तरह की समस्याओं का सिलसिला शुरू हुआ। जिसमें पूर्वी एशियाई देशों के वित्तीय संकट, अर्जेंटीना के आर्थिक संकट, रूस में बाजार अर्थव्यवस्था को बदलने का आईएमएफ द्वारा असफल प्रयास, उपसहारा अफ्रीका में विकास की कमी जैसी परिघटनायें सामने आयीं। जिस बात के लिए वह सबसे अधिक आलोचना करता है वह उच्च ब्याज दर, पूंजी का उदारीकरण, राजकोषीय नीतियां और सम्पत्ति का निजीकरण शामिल है। आईएमएफ द्वारा संचालित नवउदारवाद नव क्लासिकल और मुक्त अर्थव्यवस्था की नीतियों 18वीं शताब्दी की एडम स्मिथ द्वारा दिये गये लेसिस फेयर की नीति का अनुशरण करते है जो ट्रिकल डाउन और कम मजदूरी दरों के माध्यम से बेरोजगारी एवं गरीबी के समाधान के रूप में पेश किये जाते है। इस तरह की नीतियों को जनमानस की समस्याओं को दरकिनार करके व्यापारिक समुदाय के हितों को पूरा करने के लिए की जाती है। इसका कारण आईएमएफ और वर्ल्ड बैंक जैसी संस्थाओं में पारदर्शिता एवं जवाबदेही की कमी है। जिसके कारण यह संस्थायें व्यापारिक हितों पर आधारित संस्थाओं जैसे बहुराष्ट्रीय निगमों, पूंजीपतियों के हितों के खिलाफ जाने वाली गतिविधियों को रोकने के लिए विकासशील देशों की संस्थाओं की नीतियों से वहां विकास गतिविधियों में बाधा उत्पन्न करती है।

जेम्स कैबट्री (2018) भारत में 1991 के उदारीकरण की प्रक्रियाको जब अपनाया तो धीरे–धीरे उसके आर्थिक बृद्धि दर ने गति पकडी लेकिन हाल के वर्षों में उस वृद्धि दर का 55 प्रतिशत हिस्सा शीर्ष 10 प्रतिशत लोगों के पास है। साथ ही साथ 1922 के बाद शीर्ष 1 प्रतिशत लोगों के पास सर्वाधिक संपत्ति है। इस संपत्ति के संचयन की प्रक्रियामें असमानता, भ्रष्टाचार क्रोनी कैपिटलिज्म जैसे समीकरण राजनीतिक गतिविधियों के साथ सुशोभित है।इस किताब का सबसे खूबसूरत हिस्सा वह है जब यह बताती है कि नई अर्थव्यवस्था से पैदा हुआ कारपोरेट किस सीमा तक आगे जाता है और एक समय के बाद वह अपने आप को कर्ज से दबा हुआ घोषित कर देता है और फिर सार्वजनिक क्षेत्र पर भार बनने की कोशिश करता है।

इस प्रक्रियामें बैकों में आम जनता का पैसा भी सुरक्षित नही रहा है। बैकों के साथ इस तरह की गतिविधियों को दर्शाने के लिए रोहित आजाद (2017) राज्य और कारपोरेट्स के साथ बैंकों पर अपने लेख में यह दर्शाया है कि कैसे आर्थिक सुधारों के दौर में पब्लिक सेक्टर द्वारा दिया जाने वाला इन्फ्रास्ट्रक्चर पर दिया जाने वाला ऋण में निजी या विदेशी बैंक की भागीदारी उल्लेखनीय रूप से कम रही है जिसके कारण बैंक में एनपीए की समस्या बढ़ने लगी और बजट मे कारपोरेट्स को टैक्सेज ऑफ रेवेन्यू फॉरगॉन या लोन को राइट ऑफ नाम से खराब ऋणों को माफ किया जाने लगा इस प्रक्रिया को रघुराम राजन ने ''जोखिम रहित पूँजीवाद'' नाम से परिभाषित किया गया।राजनेता अपनी वोट बैंक के लिए गरीबों पर निर्भर हैं गरीब अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए सडी गली सरकारी सेवाओं पर निर्भर हैं। राजनेता व्यवसाइयों को संरक्षण देते है ताकि चुनाव अभियानों में धन की आवश्यकता को पूरा किया जा सके इसके बदले व्यवसाइयों को राष्ट्रीय संसाधन आसानी से रियायती दरों पर मिलते है और इस प्रक्रियामें भारत का लोकतंत्र कहीं न कहीं कमजोर हो रहा है। रोहित आजाद (2017)इसी प्रक्रिया को दो प्रश्नों के माध्यम से पूछते है. (1) इन निवेशो को राज्य खुद करने कारपोरेट्स के माध्यम से क्यों कर रहा है और कारपोरेट्स को सब्सिडी दी रहा है.

(2) बैंक, राज्य और कारपोरेट्स के इन संबंधो को आलोचनात्मक दृष्टिकोण से देखने की जरूरत पर जोर देते है।

सेन (2011) ने आर्थिक विषमतायें नामक पुस्तक में कल्याणकारी अर्थशास्त्र, उपयोगितावादी एवं समता के विचारों एवं संकल्पनाओं की समीक्षा करने के साथ ही पैरेटो और कैनेथ ऐरो की अवधारणाओं से बाहर निकलकर विषमता को देखने की बात करते है क्योंकि ये अवधारणायें आय वितरण से दूर से ही किनारा कर लेती है। उपयोगितावाद जो कल्याणकरी अर्थशास्त्र का आधार है की आलोचना करते हुए सेन यह उल्लेखित करते है कि उपयोगितावाद को तो आय के बंटवारे की ओर झांकने की फुर्सत नही है। इस कारण कल्याणकारी अर्थशास्त्र की अवधारणायें विषमताकारी नीतियों की सिफारिश कर सकती है। इस वजह से ये कल्याण अर्थशास्त्र की अवधारणायें आय विषमता की माप के लिए उपयुक्त नही है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. वैश्वीकरण की प्रक्रियामें शामिल कारकों को रेखांकित करना।
2. वैश्वीकरण के कारण बढ़ती असमानता के व्यवहारिक पक्षों की भी पडताल करना।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रणाली को नये ढंग से परिभाषित करने एवं उसमें एक निर्णायक बदलाव लाने की अर्न्तनिहित शक्ति अर्जित कर ली है। सिकन्दर का विश्व विजेता बनने का स्वप्न हो या मानव समाजों का व्यापार– काम की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर यात्राएं करना हमेशा से जारी रहा है। यात्रियों, व्यापारियों, ज्ञानियों एवं धर्म–आध्यात्म की खोज में लगे लोग अपने उद्यम, ज्ञान, हुनर, रीति–रिवाज, विचार, मूल्य, अविष्कार, प्रतीकों को लेकर हमेशा से एक जगह से दूसरे जगह आते–जाते रहे हैं। हमारे पास 'सिल्क मार्ग' का उदाहरण है। सिल्क मार्ग विश्व के महाद्वीपों को जोड़ने का कार्य करता था। यह 'सिल्क मार्ग' न सिर्फ व्यापारिक मार्ग था बल्कि सांस्कृतिक एवं धार्मिक आदान प्रदान का माध्यम भी था। बौद्ध धर्म की शाखायें इसी मार्ग से फैलीं, मुस्लिम धर्मोपदेशक इसी मार्ग से आए थे। वैश्वीकरण के अंकुर क्रिस्टोफर कोलम्बस या वास्कोडिगामा के अमेरिकी महाद्वीप या भारत की खोज जैसी साहसिक खोजों से निकले माने जा सकते हैं। सोलहवीं शताब्दी में यूरोपीय जहाजों द्वारा एशिया तक का समुद्री मार्गों को व्यापक रूप से खोजा गया। भारत कच्चे माल की जगह था। औद्योगिक क्रांति ने इसे एक बाजार के रूप में बदल दिया। इसे भारत में उपनिवेशवाद एवं यूरोप में पूंजीवाद को बढ़ावा मिला। ऐसा ही उन्होंने अमेरिका और अफ्रीका के साथ किया।

औद्योगीकरण एवं आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने न सिर्फ उत्पादन, उपभोग, पूंजी, विज्ञान, तकनीक के प्रवाह को बदला बल्कि इसके साथ समाज एवं काल के सम्बन्धों को हमेशा–हमेशा के लिये नये स्तरों पर पहुँचा दिया जहाँ पर ये प्रक्रिया आज भी गतिमान है। इसी बीच लड़े गये दो विश्व युद्धों ने न केवल युद्ध की परियोजनाओं के लिए उद्योगों का नये सिरे से गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई बल्कि विनाश के कारण अर्थव्यवस्थाओं के पुर्ननिर्माण के तरीकों में भारी परिवर्तन किया। यह मुहिम आगे चलकर विर्निर्माण की नयी योजनाओं के रूप में विश्व पटल पर आती है। इसी दौर में पूंजीवाद एक विश्वव्यापी व्यवस्था बना और सभी देश इस पूंजीवादी व्यवस्था से जुड़े। इससे पूर्व सभी देशों के अर्न्तराष्ट्रीय सम्बन्ध विश्व व्यापार या देशों के बीच वस्तुओं के विनिमय के रूप में परिभाषित होते थे। 1950 से अब तक के दौर में बनी कुछ संस्थाओं ने वैश्विक स्तर पर पूंजी के उन्मुक्त प्रवाह को बहुत ही नियोजित स्वं नीतिगत ढंग से विभिन्न देशों की सरकारो से समझौतों एवं कानूनों के संशोधन द्वारा आसान बना दिया है। इन संस्थाओं में इंटरनेशनल मॉनीटरी फंड(आई एम एफ), विश्व बैंक, गैट एवं आगे चलकर डब्ल्यू टी ओ का का

नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। वैश्वीकरण की नव उदारवाद की अवधारणा को वशिंगटन आमराय कहा जाता है। जिसको आकार देने में अमेरिकी ट्रेजरी फेडटल रिर्जव एवं वाणिज्य विभाग की राय महत्वपूर्ण थी और यह वाशिंगटन आमरायआई एम एफ और विश्व बैंक की नीतियों की पुर्नव्याख्या मात्र थी। वाशिंगटन आमराय की कुछ अहम बातें राजकोषीय अनुशासन सार्वजनिक व्यय सम्बन्धी प्राथमिकताओं में परिवर्तन, व्यय सम्बन्धी सुधार, वित्तीय उदारीकरण, व्यापार, उदारीकरण, निजीकरण विनिमयों को हटाना, सम्पत्ति सम्बन्धों अधिकार इत्यादि हैं। इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया में सोवियत रूस का विखण्डित होना भी उल्लेखनीय परिवर्तन रहा है क्योंकि इसके कारण इसका कोई वैचारिक प्रतिद्वंदी मौजूद नही रहा।

आई एम एफ और विश्व बैंक अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार एवं व्यापार घाटे को दूर करने के लिये विदेशी मुद्रा हस्तानांतरित करते है। वे सम्बन्धित देश पर ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम लागू करने का दबाव डालते हैं। इसी प्रक्रिया में विनिमय दर को बाजार से संचालित किया जाता है, चालू खाते एवं पूंजी खाते को पूर्णतया परिवर्तनीय बनाने पर जोर दिया जाता है। द्विपक्षीय, त्रिपक्षीय, बहुपक्षीय करारों से व्यापार करने की शर्तो को उदार बनाया जाता है एवं कही–कहीं तो मुक्त व्यापार क्षेत्रों की भी बात की जाती है। 1990 के दशक में आयी तीव्र इण्टरनेट एवं संचार प्रणाली ने वित्तीय सेवाओं की गतिशीलता दी। शेयर बाजारों की सातों दिन और चौबीस घंटे की चकाचौंध ने पोर्टफोलियो निवेशों को अबाध गति दी। प्रत्यक्ष विदेशी विवेशों को भी सरकारी गारंटी मिलने के बाद उसका निवेश भी सुनिश्चित होने लगा। पूंजी की संरचना इतनी गतिशील एवं जटिल है कि यह न सिर्फ कानूनों एवं समझौते के माध्यम से गतिशील रहती है बल्कि यह काले धन मनी लाण्डरिंग एवं राउण्ड ट्रिपिंग के माध्यम से भी प्रवाहित होती रहती है।

वैश्वीकरण पूंजी एवं तकनीक को जितनी रियायतें प्रदान करता है वे श्रम के सम्बन्ध में उतनी रियायत नही दिखायी पड़ती है क्योंकि यह पूंजी एवं तकनीक केन्द्रित वैश्वीकरण है। श्रम के रूप में सिर्फ वही इससे फायदे मे है जिनके पास उच्चशिक्षा एवं कौशल है। श्रमिकों की भलाई के लिये जितनी सुविधायें उत्तरदायी ढंग से बढ़ायी जानी चाहिये थी, वे सरकारों द्वारा नही बढ़ायी गयी। इसी दौर में पूँजी एवं श्रम के सम्बन्धों की नयी परिभाषा गढ़ी गयी एवं इस परिभाषा में राज्य का हस्तक्षेप परिवर्तनकारी रहा जो इस रूप में सामने आया – विकाशसील देशों में सामाजिक आर्थिक ढांचे का टूटना एवं बड़ी संख्या में सस्ते श्रमिकों का पैदा होना एवं बेरोजगारी बढ़ना। विकसित देशों की कम्पनियों के पास अधिक तकनीक होने के कारण विकासशील देशों के सस्ते श्रम विशेषकर महिलाओं के कार्यबल में बढ़ोत्तरी।

क्षेत्रीय और महाद्वीपीय स्तर पर असमानता को बढ़ावा देने में वैश्वीकरण की एक निश्चित भूमिका रही है। अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमेरिका की जनसंख्या के एक बड़े हिस्से के संसाधन यूरोप, उत्तरी अमेरिका और एशिया के विकसित इलाकों में लगा दिए गये हैं। इस कारण बहुत से समुदायों को उन संसाधनों से वंचित होना पड़ा है जिन पर उनका जीवन आश्रित था। नदियों, समुद्र, मत्स्य–क्षेत्र, खानों पर नियंत्रण विकसित देश स्थापित कर रहे हैं। इसे वैश्वीकरण का स्वाभाविक परिणाम बताया जाता है। यह प्रक्रिया असमानता पैदा करती है। यह ऐसे ढाँचे बनाती है जो समानता के खिलाफ होते हैं।

ऐसा नही है कि इससे पहले असमानता नही थी। असमानता विचार एवं भाव की तरह उपस्थित रहने वाली एवं हीनता को पैदा करने वाली एक अनिवार्य बुराई है। यह लोगों के बीच मौजूद रहने वाली प्रक्रिया है जो गरीबी, लिंग भेद, नस्लवाद, भेदभाव, अवसरों की असमानता इत्यादि कुरीतियों के रूप में प्रकट होती रहती है। वर्तमान दौर में असमानता को कई रूपों में परिभाषित एवं विश्लेषित किया गया है। इसमें विकास की प्रक्रिया से उत्पन्न असामनता काफी महत्वपूर्ण है जो आर्थिक–गैर बराबरी की बड़ी अफसोस जनक तस्वीर पेश करती है। इस आर्थिक गैर बराबरी को समझने के लिये फ्रांसीसी अर्थशास्त्री थॉमस पिकेटी की पुस्तक *कैपिटल इन ट्वेंटी फर्स्ट सेंचुरी* का बहुत उल्लेखनीय योगदान है। पिकेटी दर्शाना चाहते हैं कि पूंजी की वृद्धिदर राष्ट्रों के सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर से काफी ज्यादा है। इसके कारण जो धन अर्थव्यवस्था में पैदा हो रहा है वह कुछ प्रतिशत लोगों के हाथों में केन्द्रित होता जा रहा है और शेष देशों की पचास या साठ फीसदी आबादी की कुल सम्पत्ति से काफी अधिक है। भारत में ऑक्सफैम के रिपोर्ट के आधार पर आय असमानता की बात करें तो भारत की शीर्ष 10 प्रतिशत आबादी के पास राष्ट्रीय धन का 77 प्रतिशत हिस्सा है। जबकि शीर्ष 1 प्रतिशत लोगों के पास 51.33 प्रतिशत हिस्सा है। साथ ही साथ 2018 में 1 प्रतिशत सबसे अमीर लोगों की आर्थिक वृद्धि 33 प्रतिशत है जबकि निचली 50 प्रतिशत आबादी की वृद्धि दर सिर्फ 3 प्रतिशत है। इसी बड़ी आबादी के लिए अवसरों की समानता प्रभावित हो रही है। इसका अर्थ यह है कि कुछ कि लोगों को जो प्रयास प्रतिभा हुनरसे प्राप्त हो सकता था वह धन के केन्द्रित होने से कम जनसंख्या वाले लोग उन अवसरों के ज्यादा करीब होंगे जिन्दगी उनके लिये आसान होगी। इस प्रकार की बढती आय की असमानता निर्दयी और अनैतिक है क्योंकि कुछ लोग बढती अर्थव्यवस्था का हिस्सा है जबकि गरीब लोग अपने भोजन वस्त्र एवं दवाईयों जैसी मुलभूत जरूरतें पूरा नही कर पाती है। महिलायें और लडकियां इस प्रकार की असमानता से अधिक प्रभावित हैं। लाखों लडकियां इस असमानता के कारण अपनी पढाई बहुत जल्द छोड देती हैं तथा लडकियों को परिवार के एक बोझ मानने के चलते भ्रूण हत्या का शिकार हो जाती है या मातृत्व के देखभाल की कमी के चलते मर जाती है।

बात धन एवं संसाधनों के असमानता तक ही सीमित नही है। अमर्त्य सेन क्षमताओं की असमानता की बात करते हैं। वे आय, संसाधन में असमानता के बजाय लोगों के शिक्षा, कौशल एवं योग्यताओं को विकसित करने पर बल देते हैं, यदि किसी क्षेत्र में निरक्षरता है तो संसाधानों की समता पर बात करने के बजाय लोगों की शिक्षा पर खर्च कर उनके अन्दर योग्यता पैदा करना। स्त्री असमानता से हमेशा ही ज्यादा पीड़ित है लेकिन दलित

एवं उच्च वर्ग की स्त्रियों की परिस्थितियाँ अलग–2 है। अगर इन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर व्यक्तिगत या सामाजिक तौर पर नीतिगत प्रयास किए जायें तो सामाजिक असमानता को बेहतर ढंग से दूर किया जा सकता है। वर्तमान समय में हकीकत बन चुके भूमण्डलीकरण और असमानता को मानवीय रूप देने के लिए अधिक समावेशी एवं धन के पुर्नवितरण को बढावा देने वाली सरकारी नीतियों की आवश्यकता है। साथ ही साथ मानव समाज को अति उपभोग और अनावश्यक संग्रह की उपभोक्तावादी संस्कृति को विवेकपूर्ण ढंग से अपनाने पर बल देना होगा।

निष्कर्ष

भारत ने जब से लोकतान्त्रिक गणराज्य को अपनाया है तब से ही मानव पूंजी को विकसित करने में राज्य की भूमिका प्रश्न के दायरे में रही है। भारत के संविधान राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत करते समय बाबासाहेब बी. आर. अम्बेडकर ने कहा था कि आज हम ऐसे युग में प्रवेश कर रहे है जहां सभी के पास राजनीतिक समानता मौजूद है लेकिन सामाजिक एवं आर्थिक समानता के बगैर हमारी राजनीतिक समानता खोखली साबित होगी। आज के दौर में असमानता को कई नये रूप सामने आ रहे है या उन्हे नये ढंग से परिभाषित किया जा रहा है तो हमारे देश मे मौजूद हजारों वर्षो की सामाजिक आर्थिक असमानता को ध्यान में रखना होगा नही तो हम अपने संविधान की उस मूल भावना को नही पा पायेंगे जिसमें हम बन्धुत्व, सभी के लिय अवसरों की समता एवं सामाजिक न्याय की बात करते हैं।और इसको समाज के हर तबके तक पहुंचाने के लिए भूमिगत सुधार, संस्थागत सेवाओं का मजबूती के साथ विकास, स्वास्थ्य सेवाओं एवं बुनियादी ढाचें का विकास, श्रमिक सुरक्षा जाल, शिक्षा एवं लैगिंक संवेदन नीतियों पर ध्यान केंद्रित करना होगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *थॉमस पीकेटी(2017): पूंजी 21वीं शदी में – अनुवाद कैपिटल इन ट्वेंटी फस्ट सेंचुरी अनुवादक प्रो. भवानीशंकर बागला।*
2. *जोसेफ ई. स्टिग्लिट्ज(2012): ग्लोबलाइजेशन एण्ड इट्स डिस कंटेन्ट्। अनुवादक प्रो. भवानीशंकर बागला।*
3. *अमर्त्य सेन (2011) : आर्थिक विषमतायें अनुवाद ऑन इकोनामिक इनइक्वालिटीज। अनुवादक प्रो. भवानीशंकर बागला।*
4. *समाज विज्ञान विश्व कोष (2013) : सम्पादक अभय कुमार दूबे, राजकमल प्रकाशक।*
5. *जेम्स कैबट्री (2018) द बिलेनिअर राज :ए जर्नी थ्रू इंडिया न्यू गिल्ड एज।*
6. *आक्सफैम इंडिया (2018) : वाइडनिंग गैप।*
7. *रोहित आजाद, प्रसेनजित बोस जीका दासगुप्ता (2017): रिस्क्लेस कैपतिलिसम इन इंडिया बैंक क्रेडिट एंड इकनोमिक एक्टिविटी।*

Web Source

1. *https://www.weforum.org/agenda/2019/01/how-globalization-4-0-fits-into-the-history-of-globalization/*
2. *https://piie.com/commentary/speeches-papers/globalization-concept-causes-and-consequences*